

(पूरा बेंच)

जी. सी. मित्तल, ए.सी.जे. , ए. पी. चौधरी और एच. एस. बेदी, न्यायाधीशों के समक्ष

राम प्रसाद, -याचिकाकर्ता,
बनाम
भारतीय बैंकर संस्थान, बॉम्बे, -उत्तरदाता।

1987 का C.W.P नंबर 69671

14 मई, 1991

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 12 और 226-भारतीय कंपनी अधिनियम, 1913-धारा 26-कंपनी अधिनियम के तहत निगमित भारतीय बैंकर संस्थान-बैंकिंग में अध्ययन की उन्नति और परीक्षाओं के संचालन की दिशा में प्राथमिक उद्देश्य-संस्थान सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों को पूरा नहीं कर रहा है-ऐसा संस्थान-क्या रिट अधिकार क्षेत्र के लिए उत्तरदायी है।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों और अन्य मान्यताप्राप्त शर्तों को लागू करते हुए भारतीय बैंकर संस्थान अनुच्छेद 12 के अर्थ के भीतर या संविधान के अनुच्छेद 226 के प्रयोजनों के लिए राज्य का साधन नहीं है।

(पैरा 31)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/221 के तहत सिविल रिट याचिका में अनुरोध किया गया है कि: -

- (i) मैंडमस या सर्टिओरारी की प्रकृति का रिट या आदेश को रद्द करने वाला कोई अन्य उपयुक्त रिट आदेश या निर्देश अनुलग्नक पी-8 जारी किया जाए;
- (ii) मैंडमस की प्रकृति में एक रिट जिसमें प्रतिवादी को याचिकाकर्ता का परिणाम घोषित करने का निर्देश दिया गया है और यदि वह मई, 1986, जब परीक्षा आयोजित की गई थी, से प्रभावी होने के लिए उसे उत्तीर्ण मानने के लिए योग्य पाया जाता है, तो जारी किया जाएगा;
- (iii) प्रत्यर्थी को याचिकाकर्ता को नियमित अंतराल पर सी. ए. आई. आई. बी. भाग-I/II की परीक्षा देने की अनुमति देने का निर्देश देते हुए परमादेश की प्रकृति का एक रिट जारी किया जाए;
- (iv) याचिकाकर्ता को सी. ए. आई. आई. बी. की आगामी परीक्षा में उपस्थित होने की अनुमति देने की अंतरिम राहत और प्रतिवादी को याचिकाकर्ता का परिणाम घोषित करने का अंतरिम निर्देश जारी किया जाए;
- (v) रिट अधिकारिता नियमों के नियम 20 (2) की आवश्यकता को कृपया समाप्त किया जा सकता है;
- (vi) इस रिट याचिका की अग्रिम सूचना की सेवाओं के संबंध में आवश्यकता और अनुलग्नक की प्रतियों को भी कृपया समाप्त किया जा सकता है;
- (vii) इस रिट याचिका की लागत भी याचिकाकर्ता को दी जा सकती है;
- (viii) मूल की फाइलिंग को कृपया समाप्त किया जा सकता है;

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता एम. एम. कुमार, पवन कुमार और निर्मल सिंह।

आर. के. छिब्रर, वरिष्ठ अधिवक्ता आनंद छिब्रर और एम. एम. चौधरी, अधिवक्ता, प्रत्यर्थी की ओर से।

निर्णय

ए. पी. चौधरी, न्यायमूर्ति

- (1) इस याचिका में जिस मुख्य प्रश्न पर हमें निर्णय लेने के लिए कहा गया है, वह यह है कि क्या भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत पंजीकृत भारतीय बैंक संस्थान (जिसे बाद में 'संस्थान' के रूप में संदर्भित किया गया है), भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 और/या अनुच्छेद 226 के अर्थ के भीतर राज्य का एक साधन है?
- (2) लगभग दो दशक पहले, इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने विरिंदर कुमार कौरा बनाम भारतीय बैंक संस्थान, सिविल रिट याचिका सं. 1971 का 1116, ने 16 मार्च, 1972 को निर्णय लिया कि भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत निगमित कंपनी होने के नाते संस्थान एक निजी निकाय था; इसका कोई वैधानिक चरित्र नहीं था और इसलिए, यह अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता के लिए उत्तरदायी नहीं था। तब से एजेंसी या राज्य के साधन की अवधारणा के संबंध में कानून का एक अभूतपूर्व विकास हुआ है। अब इस निष्कर्ष को उचित ठहराना संभव नहीं है कि संस्थान केवल इस आधार पर उच्च न्यायालय के रिट अधिकार क्षेत्र के लिए सक्षम नहीं है कि यह भारतीय कंपनी अधिनियम के तहत निगमित एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी है। कंपनी अधिनियम के तहत निगमित या सोसायटी पंजीकरण अधिनियम या कुछ अन्य अधिनियमों के तहत पंजीकृत कई निकायों को राज्य की एजेंसी या साधन माना गया है। परीक्षा यह नहीं है कि किसी विशेष निगम या कंपनी या अन्य निकाय को कैसे अस्तित्व में लाया जाता है, बल्कि यह है कि क्या वास्तव में, सर्वोच्च न्यायालय के शब्दों को उधार लेना "सरकार की तीसरी शाखा" है।
- (3) प्रश्न पर विचार करने से पहले, हम तथ्यों को संक्षेप में बता सकते हैं:
इस संस्थान को 13 अप्रैल, 1928 को तत्कालीन भारतीय कंपनी अधिनियम, 1913 की धारा 26 के तहत एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के रूप में शामिल किया गया था। प्रवर्तकों में देश के प्रतिष्ठित बैंकर, व्यवसायी और उद्योगपति शामिल थे। संस्थान के प्राथमिक उद्देश्यों में से एक बैंकिंग के सिद्धांत और अभ्यास के अध्ययन की उन्नति है। चूंकि बैंकिंग सेवा उन्मुख उद्योग है, मानव शक्ति प्रमुख इनपुट है और इसलिए संस्थान ने मानव संसाधन विकास पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, संस्थान ने पत्राचार पाठ्यक्रमों के माध्यम से अन्य बातों के साथ-साथ सेवा निर्माण प्रदान करने का एक कार्यक्रम शुरू किया है। संस्थान वर्ष में दो बार 11 विषयों में बैंक कर्मचारियों के लिए अपनी एसोसिएट परीक्षा (सीएआईआईबी सर्टिफिकेटेड एसोसिएटेड ऑफ इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकर्स) आयोजित करता है, जिसे दो भागों में विभाजित किया जाता है, जिसे भाग-I और भाग-II कहा जाता है। राष्ट्रीयकृत बैंकों सहित अधिकांश बैंक संस्थान के संस्थागत सदस्य हैं। सदस्य बैंक संस्थान द्वारा जारी किए गए प्रमाणपत्रों, डिप्लोमा आदि को मान्यता देते हैं और उसके आधार पर अनुदान पदोन्नति, वरिष्ठता तय करते हैं और वेतन वृद्धि की अनुमति देते हैं।
- (4) याचिकाकर्ता स्टेट बैंक ऑफ महाराष्ट्र में क्लर्क है जो चंडीगढ़ में तैनात है। वह मई, 1986 में संस्थान द्वारा आयोजित सीएआईआईबी भाग-1 की परीक्षा में उपस्थित हुए। संस्थान ने याचिकाकर्ता पर

इस आधार पर तीन गुना दंड लगाया कि उसकी उत्तर पुस्तिका में ऐसी सामग्री थी जिसे या तो किसी अन्य परीक्षार्थी से कॉपी किया गया था या जिसे याचिकाकर्ता और कुछ अन्य लोगों द्वारा एक सामान्य स्रोत से कॉपी किया गया था। जुर्माना यह था कि परीक्षा के लिए उनका नामांकन रद्द कर दिया गया था, उन्हें 31 मई, 1991 तक संस्थान द्वारा आयोजित किसी भी परीक्षा में बैठने से रोक दिया गया था, और उनका नाम उस बैंक को सूचित किया जाना था जिसमें वे सेवारत थे। याचिकाकर्ता ने अनुच्छेद 226 के तहत वर्तमान रिट याचिका के माध्यम से उपरोक्त दंड के अधिरोपण को चुनौती दी, जिसमें प्रत्यर्थी को अपना परिणाम घोषित करने और यदि वह उत्तीर्ण पाया जाता है, तो उसे परीक्षा की तारीख से प्रभावी रूप से व्यवहार करने और संस्थान द्वारा लगाए गए अन्य दंडों को हटाने के लिए निर्देश देने की मांग की गई है।

- (5) रिट याचिका का विरोध किया गया है। एक प्रारंभिक आक्षेप लिया गया था कि रिट याचिका विचारणीय नहीं थी क्योंकि प्रतिवादी राज्य का साधन नहीं था।
- (6) विद्वत एकल न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई के समय, प्रत्यर्थी के विद्वत वकील ने विरिंदर कुमार कौरा के मामले पर भरोसा जताया। यह प्रस्तुत किया गया था कि उपरोक्त निर्णय का पालन इस अदालत के बाद के फैसलों में किया गया था, अर्थात्, राम निवास गर्ग बनाम भारतीय रिजर्व बैंक जी. के. छाबड़ा और अन्य बनाम भारतीय बैंक संस्थान और पी. माजू नाथ बनाम भारतीय बैंक संस्थान मामले में कर्नाटक उच्च न्यायालय की एकल पीठ के फैसले में किया गया था।
- (7) याचिकाकर्ता की ओर से, यह तर्क दिया गया कि कानून की इस शाखा के विकास को देखते हुए विरिंदर कुमार कौरा के मामले में निर्णय पर फिर से विचार करने की आवश्यकता है जैसा कि रमण दयाराम शेट्टी बनाम भारतीय अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण और अन्य, और अजय हासिया आदि, बनाम खालिद मुजीब सहरावदी और अन्य में उल्लेख किया गया है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रश्न को एक बड़ी पीठ को भेजा और जब मामला एक खंड पीठ के समक्ष आया, तो इसे आगे एक बड़ी पीठ को भेजा गया और इस तरह मामला हमारे सामने है।
- (8) एसोसिएशन के ज्ञापन, आर्टिकल्स ऑफ एसोसिएशन और रिटर्न के साथ प्रतिवादी द्वारा दायर लेखा की 60 वीं वार्षिक रिपोर्ट के अलावा, हमारे पास नियमों की एक पुस्तिका भी है, जो प्रतिवादी संस्थान के हीरक जयंती समारोह के अवसर पर 30 अप्रैल, 1988 को फाइनेंशियल एक्सप्रेस, नई दिल्ली द्वारा लाए गए विशेष पूरक की एक प्रति है, जिसमें संस्थान और उसके कामकाज के विभिन्न पहलुओं पर लेख हैं। याचिकाकर्ता द्वारा 61 वीं वार्षिक आम बैठक में संस्थान के अध्यक्ष के भाषण का पाठ भी रिकॉर्ड में रखा गया है, जैसा कि भारतीय बैंक संस्थान के जुलाई-सितंबर 1988 के अंक की पत्रिका में बताया गया है। इन दस्तावेजों को प्रतिवादी के विद्वान वकील की सहमति से रिकॉर्ड पर लिया गया था।
- (9) जैसा कि इस आदेश की शुरुआत में उल्लेख किया गया है, प्रत्यर्थी के विद्वान वकील श्री आर. के. छिब्वर द्वारा यह स्वीकार किया गया था कि विरिंदर कुमार कौरा के मामले में निर्णय का समर्थन केवल इस आधार पर नहीं किया जा सकता है कि संस्थान को कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के तहत एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के रूप में शामिल किया गया था। हालाँकि, उनका तर्क है कि

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों को लागू करके संस्थान को अनुच्छेद 12 या अनुच्छेद 226 के दायरे में नहीं लाया जा सकता है।

- (10) दूसरी ओर, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री एम. एम. कुमार का तर्क है कि प्रत्यर्थी-संस्थान उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों में से कम से कम तीन को संतुष्ट करता है और इसलिए, प्रत्यर्थी-संस्थान को राज्य का एक साधन माना जाना चाहिए ताकि इस न्यायालय के रिट न्यायशास्त्र के लिए उत्तरदायी हो।
- (11) हमने दोनों पक्षों के विद्वान वकील की संबंधित दलीलों पर गंभीरता से विचार किया है।
- (12) कल्याणकारी राज्य के आगमन के साथ, सरकार की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ गईं और यह तेजी से महसूस किया गया कि सिविल सेवा का ढांचा नए कार्य को संभालने के लिए पर्याप्त नहीं था जो अक्सर विशेष और उच्च तकनीकी चरित्र का होता था। इन परिस्थितियों में इन नई समस्याओं से निपटने के लिए एक नया साधन या प्रशासनिक उपकरण बनाना आवश्यक हो गया। निगमों के साधन, चाहे वे कंपनी अधिनियम के तहत निगमित हों या स्वयं विशेष निगम से संबंधित किसी विशेष कानून के तहत या किसी अन्य अधिनियम के तहत निगमित हों, में काफी त्वरित निर्णय लेने के लिए वांछित लचीलापन और क्षमता पाई गई जो समय की आवश्यकता थी। इनमें से कुछ निकाय सरकारी कार्यों का प्रयोग करते थे। कुछ मामलों में, निगम पूरी तरह से या पर्याप्त रूप से सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण में थे और यह बदली हुई स्थिति में था कि यह प्रश्न विचार के लिए सामने आया कि क्या एक निजी निकाय के रूप में सामने आने वाले निगम राज्य के बराबर हैं या संविधान के अनुच्छेद 12 और 226 के अर्थ के भीतर राज्य के साधन हैं। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों में अदालतों द्वारा व्यक्तिगत मामलों का निर्णय लिया जाता था। उनके सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्षों ने ऐसे कई मामलों पर विचार किया और रमण दयाराम शेट्टी के मामलों में पैराग्राफ 19 में विभिन्न परीक्षण तैयार किए।
- (13) सर्वोच्च न्यायालय की एक संविधान पीठ ने अजय हासिया के मामले में उपरोक्त परीक्षणों को दोहराया। पृष्ठ 496 पर पैराग्राफ 9 में परीक्षणों को निम्नानुसार तैयार किया गया था:
- (1) एक बात स्पष्ट है कि यदि निगम की पूरी शेयर पूंजी सरकार के पास है तो यह संकेत देने की दिशा में एक लंबा रास्ता तय करेगा कि निगम सरकार की एक प्रशिक्षक मानसिकता या एजेंसी है।
 - (2) जहां राज्य की वित्तीय सहायता निगम के लगभग पूरे खर्च को पूरा करने के लिए है, वहां यह निगम के सरकारी चरित्र से प्रभावित होने का कुछ संकेत देगा।
 - (3) यह एक प्रासंगिक कारक भी हो सकता है कि क्या निगम को एकाधिकार का दर्जा प्राप्त है जो राज्य द्वारा प्रदान किया गया है या राज्य संरक्षित है।
 - (4) गहन और व्यापक राज्य नियंत्रण का अस्तित्व इस बात का संकेत दे सकता है कि निगम एक राज्य एजेंसी या साधन है।
 - (5) यदि सार्वजनिक महत्व के निगम का कार्य और सरकारी कार्यों से निकटता से संबंधित है, तो यह निगम को सरकार की एक संस्था या एजेंसी के रूप में वर्गीकृत करने में एक प्रासंगिक कारक होगा।

(6) विशेष रूप से, यदि सरकार के किसी विभाग को किसी निगम में स्थानांतरित किया जाता है, तो यह निगम के सरकार की एक साधन या एजेंसी होने के इस निष्कर्ष का समर्थन करने वाला एक मजबूत कारक होगा।

(14) उपर्युक्त परीक्षणों को लागू करने से पहले, प्रतिवादी-संस्थान की संरचनात्मक और कार्यात्मक दोनों रूप से मुख्य विशेषताओं पर संक्षेप में ध्यान देना आवश्यक है।

(15) संस्थान को भारतीय कंपनी अधिनियम, 1913 की धारा 26 के तहत एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के रूप में शामिल किया गया था। संस्थान की सदस्यता सदस्यों की पाँच श्रेणियों तक सीमित थी। सदस्यों को प्रति वर्ष निर्दिष्ट शुल्क का भुगतान करना पड़ता था। संस्थान के मामलों का प्रबंधन एक निर्वाचित निकाय में निहित था जिसे परिषद कहा जाता था जिसमें संस्थान के कम से कम 10 और 30 से अधिक सदस्य नहीं होते थे। सदस्यों का चुनाव संस्थान की वार्षिक आम बैठक में किया जाना था। परिषद को अधिक से अधिक उप-समितियों का गठन करने का अधिकार दिया गया था। संस्थान के अध्यक्ष का चुनाव करने के लिए सामान्य निकाय की आवश्यकता थी। संस्थान को उचित लेखा रखने की आवश्यकता थी। इसके अलावा खातों का लेखा-परीक्षण कराने की आवश्यकता थी। संस्थान के साथ-साथ परिषद के लोकतांत्रिक कामकाज के लिए विस्तृत प्रावधान आर्टिकल्स ऑफ एसोसिएशन में किए गए थे।

(16) संस्थान के तथ्यों के लिए परीक्षण संख्या 1 और 2 को लागू करते हुए, यह स्पष्ट है कि संस्थान की शेयर पूंजी केंद्र सरकार या राज्य सरकार के पास नहीं है और न ही संस्थान वित्तीय सहायता के लिए सरकार पर निर्भर है। वास्तव में, 60 वीं वार्षिक रिपोर्ट के संदर्भ में संस्थान की आय का निम्नलिखित विवरण मिलता है: -

(1) परीक्षा शुल्क	= 45.82 प्रतिशत
(2) व्यक्तिगत सदस्यों से सदस्यता	= 23.15 प्रतिशत
(3) संस्थागत सदस्यों से सदस्यता	= 16.09 प्रतिशत
(4) ब्याज और अन्य विविध	= 12.05 प्रतिशत
(5) पत्राचार पाठ्यक्रम ट्यूटोरियल कक्षा शुल्क और पुस्तकों के प्रकाशन पर रॉयल्टी	= 2.89 प्रतिशत
	<hr/>
	100.00
	<hr/>

(17) 1988 में संस्थान की कुल सदस्यता 6 लाख से अधिक थी। वर्ष में दो बार संस्थान की एसोसिएट परीक्षा में लगभग 2 लाख उम्मीदवार उपस्थित होते थे। यह परीक्षा देश के 488 केंद्रों और विदेशों में 13 केंद्रों पर आयोजित की गई थी। हर साल लगभग 40,000 नए सदस्यों को प्रवेश दिया जाता था और संस्थान की परीक्षा में बड़ी संख्या में सदस्य उपस्थित होते थे, (संस्थान के मुख्य सचिव प्रो. आर. डी. पांडिया के लेख के अनुसार, फाइनेंशियल एक्सप्रेस सप्लीमेंट के पेज 11 कॉलम 1 और 5 पर)

- (18) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री कुमार, राष्ट्रपति के भाषण से केवल इतना ही बता सके कि उन्होंने संस्थान को उदार और निरंतर वित्तीय सहायता के लिए बैंकों और वित्तीय संस्थानों के प्रबंधन के प्रति आभार व्यक्त किया। ऊपर दी गई पृष्ठभूमि में, "वित्तीय सहायता" संस्थान को किसी भी प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता का संकेत नहीं है। यह अप्रत्यक्ष रूप से है कि विभिन्न बैंक अपने कर्मचारियों को प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों से गुजरने की अनुमति देते हैं जो संस्थान द्वारा डिजाइन और संचालित किए जाते हैं। वे शुल्क के भुगतान पर विभिन्न परीक्षाओं का लाभ उठाते हैं और इस तरह संस्थान के संसाधनों में वृद्धि करते हैं। यदि बैंक अपना समर्थन वापस ले लेते तो यह संभव नहीं होता। इसलिए, एकमात्र निष्कर्ष यह है कि इस मामले में न केवल पहले दो परीक्षण संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि यह स्पष्ट है कि संस्थान के पास आय के स्वतंत्र स्रोत हैं और यह किसी भी वित्तीय सहायता के लिए सरकार पर निर्भर नहीं है।
- (19) श्री कुमार का यह तर्क कि संस्थान को एकाधिकार का दर्जा प्राप्त है, जो परीक्षण संख्या 3 के लिए संदर्भित है, काफी हद तक इस तथ्य पर आधारित है कि यह संस्थान भारत में अपने प्रकार का एकमात्र संस्थान है और सभी बैंकों को इस पर निर्भर रहना पड़ता है। दूसरे शब्दों में, संस्थान को एकाधिकार का दर्जा प्राप्त है। हमारे विचार में, विवाद असमर्थनीय है। कथित एकाधिकार का दर्जा न तो राज्य को दिया गया है और न ही राज्य संरक्षित है। यह देखा गया है कि संस्थान को एक प्राइवेट लिमिटेड कंपनी के रूप में शामिल किया गया था और यह अभी भी जारी है। ऐसा कोई कानून नहीं है जो समान उद्देश्यों और उद्देश्यों वाली किसी अन्य कंपनी को शामिल करने से रोकता हो। पूरक के पृष्ठ 10 कॉलम 1 पर मिस्टर एम. एन. गोइपोरिया के लेख में, कई संस्थानों का संदर्भ है जिनके पास बैंकिंग की विभिन्न शाखाओं में प्रशिक्षण सुविधाएं हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वर्षों से विकसित सीएआईआईबी की परीक्षा प्रणाली संस्थान के लिए विशिष्ट है और इस मायने में यह एक अग्रणी है और एकाधिकार रखता है, लेकिन उपरोक्त स्थिति न तो राज्य को प्रदान की गई है और न ही राज्य संरक्षित है। इसलिए, हमारे विचार में, यह परीक्षण संतुष्ट नहीं है।
- (20) चौथे परीक्षण के संबंध में, श्री कुमार ने प्रस्तुत किया कि संस्थान पर गहरा और व्यापक राज्य नियंत्रण इस तथ्य से स्पष्ट है कि एक अखंड परंपरा द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर को संस्थान के अध्यक्ष के रूप में चुना गया था। उन्होंने आगे कहा कि भारत सरकार ने 1969 में एक बैंकिंग आयोग नियुक्त किया था और संस्थान को भारत सरकार के शीर्ष सरकारी अधिकारियों के "मार्गदर्शन, सलाह और परामर्श" का लाभ मिला था। इन प्रस्तुतियों के लिए, विद्वान वकील ने उपरोक्त फाइनेंशियल एक्सप्रेस में लिखे लेख पर भरोसा किया। हमारे विचार में, ये तथ्य संस्थान पर गहरे और व्यापक राज्य नियंत्रण को नहीं दर्शाते हैं। संघ के अनुच्छेदों के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, संस्थान के अध्यक्ष का चुनाव आम बैठक में किया जाना है। उक्त प्रावधानों के अनुसार, भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर को अध्यक्ष के रूप में चुनने की परंपरा को बंद करना पूरी तरह से संभव है। वास्तव में, यह संस्थान के साथ-साथ भारतीय रिजर्व बैंक के गवर्नर के लिए एक पारस्परिक रूप से स्वीकार्य व्यवस्था प्रतीत होती है। जहाँ तक संघ के अनुच्छेदों का संबंध है, यह प्रावधान अपने सदस्यों में से अध्यक्ष के चुनाव के लिए है।
- (21) बैंकिंग आयोग की नियुक्ति किसी भी राज्य के नियंत्रण को नहीं दर्शाती है। यह नहीं दिखाया गया है कि बैंकिंग आयोग के संदर्भ की शर्तें केवल संस्थान से संबंधित हैं और देश में सामान्य रूप से बैंकिंग उद्योग से संबंधित नहीं हैं। श्री कुमार द्वारा जिस लेख पर भरोसा किया गया है, उससे आगे पता चलता है कि बैंकिंग आयोग 1969 की सिफारिशों की जांच श्री आर. के. तलवार की अध्यक्षता में संस्थान की परिषद द्वारा गठित एक समिति द्वारा की गई थी और सिफारिशों को बैंकिंग आयोग की सिफारिशों के रूप में नहीं, बल्कि संस्थान की परिषद द्वारा गठित समीक्षा

समिति की सिफारिशों के रूप में स्वीकार किया गया था -(Vide page 10 column 6 of the Special Supplement). मार्गदर्शन, सलाह और परामर्श देना किसी भी राज्य के नियंत्रण का संकेत नहीं देता है। ज्ञापन या किसी भी कानून के अनुच्छेदों का कोई प्रावधान हमारे संज्ञान में नहीं लाया गया है जो सरकार के किसी भी निर्देश को संस्थान के लिए बाध्यकारी बनाएगा। चीजों की प्रकृति में, इसे देने वाले व्यक्ति और इसे प्राप्त करने वाले व्यक्ति की इच्छा के आधार पर किसी भी हिस्से से मार्गदर्शन, सलाह और परामर्श प्राप्त किया जा सकता है।

(22) पांचवें परीक्षण के संबंध में, श्री कुमार ने प्रस्तुत किया कि संस्थान के कार्य सार्वजनिक महत्व के थे और सरकारी कार्यों से निकटता से जुड़े थे। इस संबंध में, उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 41 की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया, जिसमें राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों में से एक शिक्षा के अधिकार को सुरक्षित करने के लिए एक प्रभावी प्रावधान करना है। यह तर्क दिया गया था कि संस्थान के घोषित उद्देश्यों में से एक बैंकिंग में शिक्षा को शामिल करना है। इस मायने में, संस्थान एक सरकारी कार्य कर रहा था। चूंकि संस्थान द्वारा आयोजित परीक्षा में विभिन्न बैंकों के 2 लाख से अधिक कर्मचारी उपस्थित हुए थे, इसलिए यह वैध रूप से कहा जा सकता है कि संस्थान एक सार्वजनिक कार्य का निर्वहन कर रहा था जो एक सरकारी कार्य के समान था। सार्वजनिक महत्व के निगम के कार्यों के आधार पर परीक्षण पर विचार करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने रमण दयाराम सिंह के मामले में ई. एस. इवांस बनाम चार्ल्स ई. न्यूटन, और स्मिथ बनाम ऑलराइट का उल्लेख किया और कहा कि निर्णयों से पता चलता है कि कार्य के सार्वजनिक या सरकारी चरित्र की कसौटी को लागू करना आसान नहीं है और यह हमेशा सही निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाता है क्योंकि सरकारी गतिविधि की सीमा व्यापक और विविध है, और केवल इसलिए कि कोई गतिविधि ऐसी हो सकती है जो सरकार द्वारा वैध रूप से की जा सकती है, इसका मतलब यह नहीं है कि एक निगम जो अन्यथा एक निजी इकाई है, ऐसी गतिविधि करने के कारण सरकार का एक साधन या एजेंसी होगा। इसलिए, परीक्षण को लागू करने में, एक और सावधानी बरती जानी चाहिए, और यह देखा जाना चाहिए कि क्या कार्रवाई की सार्वजनिक प्रकृति सरकारी चरित्र के साथ निहित है या "सरकार के साथ बंधी हुई या जुड़ी हुई है" या किसी अन्य अतिरिक्त कारक द्वारा मजबूत है-पृष्ठ 641 पर पैरा 18 कॉलम 2 में टिप्पणियों के अनुसार। इसलिए, हमारे विचार में, 5 वीं परीक्षा उत्तीर्ण नहीं हो रही है।

(23) इसके अलावा, सरकार के किसी भी विभाग को संस्थान में स्थानांतरित नहीं किया गया था और इस मामले में परीक्षण संख्या 6 भी उत्तीर्ण नहीं हो रहा है।

(24) श्री कुमार द्वारा दिए गए विभिन्न निर्णय याचिकाकर्ता के मामले का समर्थन नहीं करते हैं। मास्टर विभु कपूर बनाम काउंसिल ऑफ इंडियन स्कूल सर्टिफिकेट एग्जामिनेशन और एक अन्य मामले में विचार के लिए प्रश्न यह था कि क्या काउंसिल ऑफ इंडियन स्कूल सर्टिफिकेट एग्जामिनेशन, जो सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1860 के तहत पंजीकृत एक सोसायटी थी, भारत के संविधान के अनुच्छेद 12/226 के तहत राज्य के साधन में थी। यह देखा गया कि परिषद ने शिक्षा प्रदान करने के अपने सार्वजनिक कार्यों का निर्वहन करने में सक्षम बनाने के लिए सरकार के साथ एक व्यवस्था की थी और इस तरह उसे न केवल सार्वजनिक परीक्षाएं आयोजित करने का अधिकार या रियायत या विशेषाधिकार प्राप्त हुआ था, बल्कि दिल्ली शिक्षा अधिनियम की धारा 2 (ओं) द्वारा सार्वजनिक कार्य या शिक्षा प्रदान करने के सरकारी कार्य के निर्वहन के लिए सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त और अधिकृत व्यक्तियों के निकाय या समाज के रूप में वैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त थी। परिषद के नियमों और विनियमों से यह भी पता चला कि परिषद के कामकाज पर सरकारी पर्यवेक्षण था, लेकिन नियंत्रण नहीं था। इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि परिषद न केवल

संरचनात्मक रूप से बल्कि कार्यात्मक रूप से भी सरकारी चरित्र से गहराई से ओत-प्रोत थी और एक सार्वजनिक कार्य का निर्वहन कर रही थी। इसलिए परिषद को संविधान के अनुच्छेद 226-पैरा 34 के अर्थ के भीतर एक प्राधिकरण माना गया था।

(25) पवन कुमार बनाम पंजाब राज्य में, इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि मूल रूप से थापर इंस्टीट्यूट ऑफ इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी, पटियाला, सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत एक सोसायटी के रूप में पंजीकृत था। इसे केंद्र सरकार की एक अधिसूचना द्वारा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम, 1956 की धारा 3 के तहत एक विश्वविद्यालय घोषित किया गया था और इस तरह संस्थान को कानूनी अधिकार प्राप्त थे और यह संविधान के अनुच्छेद 12 के साथ-साथ 226 में 'राज्य' की विस्तारित परिभाषा के तहत शामिल था। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकर्स को ऐसा कोई दर्जा या अधिकार नहीं दिया गया है और इस प्रकार पवन कुमार का मामला स्पष्ट रूप से अलग है।

(26) अंत में, श्री कुमार ने तर्क दिया कि संविधान का अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालय को विशेषाधिकार रिट की प्रकृति में रिट जारी करने की व्यापक शक्तियां प्रदान करता है। यह प्रस्तुत किया गया था कि यह अंग्रेजी कानून से एक आश्चर्यजनक विचलन था। यह भी कहा गया कि अनुच्छेद 226 के तहत किसी भी व्यक्ति या प्राधिकरण को रिट जारी की जा सकती है। यह किसी भी मौलिक अधिकार के प्रवर्तन और किसी अन्य उद्देश्य के लिए जारी किया जाएगा। इसलिए, यह तर्क दिया गया कि अनुच्छेद 226 के व्यापक आयाम को इसका उचित प्रभाव दिया जाना चाहिए। द्वारका-नाथ बनाम आयकर अधिकारी में अनुच्छेद 226 के दायरे के संबंध में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियों का संदर्भ दिया गया था। इसमें निम्नलिखित रूप में देखा गया था :-

“यह लेख व्यापक वाक्यांशों में दिया गया है और यह उच्च न्यायालयों को जहां कहीं भी अन्याय पाया जाता है, वहां तक पहुंचने की व्यापक शक्ति प्रदान करता है। संविधान ने शक्ति की प्रकृति, किस उद्देश्य के लिए और किस व्यक्ति या प्राधिकरण के खिलाफ इसका प्रयोग किया जा सकता है, इसका वर्णन करने के लिए एक व्यापक भाषा का उपयोग किया। यह इंग्लैंड में समझे जाने वाले विशेषाधिकार रिटों की प्रकृति में रिट जारी कर सकता है; लेकिन उक्त अभिव्यक्ति के लिए "प्रकृति" अभिव्यक्ति का उपयोग भारत में जारी किए जा सकने वाले रिटों को इंग्लैंड में जारी किए जा सकने वाले रिटों के बराबर नहीं करता है, बल्कि उनसे केवल एक सादृश्य आकर्षित करता है। इसके अलावा, उच्च न्यायालय विशेषाधिकार रिट के अलावा अन्य निर्देश, आदेश या रिट भी जारी कर सकते हैं। यह उच्च न्यायालयों को इस देश की विशिष्ट और जटिल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राहतों को ढालने में सक्षम बनाता है।”

(27) विद्वान वकील ने श्री अनादी मुक्त सद्गुरु श्री मुक्ताजी वंदासजीस्वामी, सुवर्ण जयंती उत्सव स्मारक ट्रस्ट और अन्य बनाम वी आर रुदानी और अन्य में की गई टिप्पणियों पर भी भरोसा जताया था। जिस हिस्से पर भरोसा किया गया है वह निम्नानुसार है :-
“इस संदर्भ में अनुच्छेद 226 में उपयोग किए गए शब्दों "प्राधिकरण" को अनुच्छेद 12 में शब्द के विपरीत एक उदार अर्थ प्राप्त होना चाहिए। अनुच्छेद 12 केवल अनुच्छेद 32 के तहत मौलिक अधिकारों को लागू करने के उद्देश्य से प्रासंगिक है। अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालयों को मौलिक अधिकारों के साथ-साथ गैर-मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए रिट जारी करने की शक्तियां प्रदान करता है।”

मिस्टर आर. के. छिबबार का तर्क है कि एक सार्वजनिक कर्तव्य या एक वैधानिक कर्तव्य के निष्पादन को सुरक्षित करने के लिए एक परमादेश निहित है, जिसके निष्पादन में जो

इसके लिए आवेदन करता है, उसका पर्याप्त कानूनी हित होता है। परमादेश के मुद्दे के लिए पूर्ववर्ती शर्त यह है कि एक में यह दावा किया गया है कि यह उस व्यक्ति द्वारा कानूनी कर्तव्य के प्रदर्शन का कानूनी अधिकार है जिसके खिलाफ इसे मांगा गया है। दूसरे शब्दों में, परमादेश का आदेश एक आदेश के रूप में होता है जो किसी व्यक्ति, निगम या एक निम्न न्यायाधिकरण को निर्देशित किया जाता है जिसमें उसे या उन्हें उसमें निर्दिष्ट कोई विशेष कार्य करने की आवश्यकता होती है जो उसके या उसके कार्यालय से संबंधित है और एक सार्वजनिक कर्तव्य की प्रकृति में है।

- (28) मिस्टर छिब्रार के विवाद को प्रागा टूल्स कॉरपोरेशन बनाम सी. वी. इमानूएल और अन्य लोगों का समर्थन प्राप्त है। यह पैरा 7 में निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गया था :-
“7. कंपनी एक गैर-सांविधिक निकाय होने के कारण और कंपनी अधिनियम के तहत निगमित होने के कारण उस पर न तो एक कानून द्वारा कोई वैधानिक और न ही कोई सार्वजनिक कर्तव्य लगाया गया था, जिसके संबंध में किसी आदेश के माध्यम से प्रवर्तन की मांग की जा सकती थी, और न ही उसके कर्मचारियों में ऐसे किसी वैधानिक या सार्वजनिक कर्तव्य को लागू करने के लिए कोई सुसंगत कानूनी अधिकार था। इसलिए, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करना सही था कि कंपनी के खिलाफ कोई भी रिट याचिका या आदेश की प्रकृति में कोई आदेश नहीं हो सकता है।”
- (29) यहां तक कि अनादी मुक्त सद्गुरु के मामले में, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा जिस अवलोकन पर भरोसा किया गया था, उसके बाद निम्नलिखित अवलोकन किया गया था: -
“इसलिए अनुच्छेद 226 में उपयोग किए गए शब्द "कोई भी व्यक्ति या प्राधिकरण" केवल राज्य के वैधानिक प्राधिकरणों और उपकरणों तक ही सीमित नहीं हैं। वे सार्वजनिक कर्तव्य का पालन करने वाले किसी अन्य व्यक्ति या निकाय को शामिल कर सकते हैं।”

संबंधित शरीर का रूप बहुत अधिक प्रासंगिक नहीं है। जो प्रासंगिक है वह शरीर पर लगाए गए कर्तव्य की प्रकृति है। सार्वजनिक प्राधिकरण का अर्थ है हर वह व्यक्ति जो कानून द्वारा बनाया गया है और जिसकी शक्तियाँ और कर्तव्य कानून द्वारा परिभाषित किए गए हैं। इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि सरकारी विभाग, स्थानीय प्राधिकरण, पुलिस प्राधिकरण और वैधानिक उपक्रम और निगम सभी सार्वजनिक प्राधिकरण हैं। उनके प्रभुओं द्वारा बताए गए अर्थ में, यह नहीं कहा जा सकता है कि भारतीय बैंकर संस्थान को एक सार्वजनिक प्राधिकरण माना जा सकता है, भले ही संस्थान जनता के संबंध में कार्य कर रहा हो। उक्त कार्य किसी कानून के अनुपालन में नहीं किया जा रहा है।

(30) इसके अलावा, अनादी मुक्त सद्गुरु के मामले में निर्णय इस आधार पर अलग है कि उस मामले में विज्ञान महाविद्यालय चलाने वाले ट्रस्ट को राज्य से अनुदान मिल रहा था। संस्थान को राज्य अनुदान दिए जाने का कोई सवाल ही नहीं है।

(31) पूर्वगामी कारणों से, हम पाते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षणों और अन्य अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त शर्तों को लागू करने के लिए, भारतीय बैंकर्स संस्थान अनुच्छेद 12 के अर्थ के भीतर या संविधान के अनुच्छेद 226 के उद्देश्यों के लिए राज्य की अनुदेशात्मक मानसिकता नहीं है। हम, इसलिए, विरिंदर कुमार कौरा बनाम द इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ बैंकर्स में विद्वान एकल न्यायाधीश के दृष्टिकोण की पुष्टि करते हैं, हालांकि पूरी तरह से अलग कारणों से।

(32) उपरोक्त निष्कर्ष के परिणामस्वरूप, रिट याचिका विफल हो जाती है और उसे लागत के रूप में किसी भी आदेश के बिना खारिज कर दिया जाता है। यदि याचिकाकर्ता को इस तरह की सलाह दी जाती है, तो उसे एक नियमित दीवानी मुकदमे द्वारा राहत मिल सकती है।

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

रजत कुमार कनौजिया
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी,
फ़रीदाबाद, हरियाणा